लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत सत्ताः नगर निगम के कार्य के विशेष संदर्भ में

शिल्पी रानी
शोध छात्रा
राजनीति विज्ञान विभाग
आर0जी0 (पी0जी0) कॉलेज, मेरठ
Email: prempalsharma1956@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 01.09.2020
Approved: 30.09.2020

शिल्पी रानी

लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकृत सत्ताः नगर निगम के कार्य के विशेष संदर्भ में

RJPP 2020,
Vol. XVIII, No. II,
pp.205-210
Article No. 25

Online available at *:*
https://anubooks.com/?page_id=6391

सारांश

पंचायती राज, लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का पर्यायवाची रूप है। विकेन्द्रीकरण में सत्ता का विभिन्न स्तरों पर हस्तरण होता है जैसे– केन्द्रीय (राष्ट्रीय), प्रांतीय (राज्य) एवं स्थानीय (पंचायत एवं नगर निगम) स्तरों पर इसके द्वारा शासन में जनता की अधिकाधिक भागीदारी सुनिश्चित की जाती है– जिसे 'ग्रासरूट डेमोक्रेसी' का नाम दिया गया है।

लोकतंत्र की वास्तविक क्रियान्वति तभी पूरी मानी जाती है जब शासन के सभी स्तरों पर लोगों की भागीदारी हो। जनसाधारण का शासन के साथ सीधा सम्पर्क हो एवं उनकी नागरिक आवश्यकताओं की पूर्ति का आरम्भ स्थानीय स्तर से ही आरम्भ होता है। यह स्थानीय क्षेत्र चाहे शहर हो या गाँव। इसलिए इन स्तरों पर नागरिक सुविधाओं को पहुँचाने, विकास कार्यों संबंधी निर्णय लेने, उन्हें लागू करने तथा इस स्तर पर लोगों की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं को एकत्रित करने के लिए किसी न किसी रूप में संस्था बनाई जाती है। लोकतांत्रिक सिद्धान्तों की मांग है कि यह संस्थाएँ प्रतिनिधितामक और उत्तरदायी हों। इसलिए लोकतांत्रिक देशों में स्थानीय स्वशासन का विशेष महत्व है।

प्रस्तावना

स्थानीय स्वशासन के माध्यम से ही कोई राष्ट्र सुसंगठित एवं शक्तिशाली होता है। इसलिए इसे 'लोकतंत्र का प्राण' कहा गया है। लॉक ब्राइस ने अपनी पुस्तक 'मॉडर्न डेमोक्रेसी' में लिखा है ''लोकतंत्र का सर्वोत्तम जरिया तथा उसकी सफलता की सर्वोत्तम गारण्टी स्थानीय स्वशासन की पद्धति है।''

महात्मा गाँधी ने 18 जनवरी 1948 को 'हरिजन' में लिखा कि सच्चा लोकतंत्र केन्द्र में बैठे हुए बीस व्यक्तियों के द्वारा क्रियान्वित नहीं किया जा सकता। इसे गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को कार्यान्वित करना है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पंचायते हमारी राजनीतिक व्यवस्था का अंग तो बनी, लेकिन ग्रामीण विकास के मामलों में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभा पाई। पंचायती राज का ढांचा तथा मुख्य बातें प्रायः सभी राज्यों में समान ही है। जनसंख्या, क्षेत्र एवं वातावरण में भिन्नता के कारण कुछ अन्तर स्वाभाविक है। समिति ने ग्राम स्तर पर 'ग्राम पंचायत' प्रखण्ड स्तर पर पंचायत समिति तथा जिला स्तर पर जिला परिषद की सिफारिश की। सन् 1958 में राष्ट्रीय विकास परिषद ने मेहता समिति के लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण सिद्धान्त का समर्थन किया। 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर में 'प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण' की योजना का श्री गणेश हुआ जिसे पंचायतीराज कहा गया।

पंचायतों को संवैधानिक अधिकार देने के लिए संसद में 64वाँ संविधान संशोधन विधेयक 15 मई 1989 लाया गया। यह लोकसभा में तो पारित हो गया लेकिन राज्यसभा में पारित नहीं हो सका, किन्तु पंचायती राज के सशक्तिकरण में इस विधेयक ने एक महत्वपूर्ण आधार का काम किया। पुनः 73वाँ संशोधन विधेयक, 1992 जिसे 16 दिसम्बर, 1992 को पी0पी0 नरसिम्हा सरकार ने लोकसभा में प्रस्तुत किया। यह विधेयक 64वें संशोधन विधेयक की संशोधित प्रति थी। 22 दिसम्बर 1992 लोकसभा एवं 23 दिसम्बर, 1992 राज्यसभा में 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम के रूप में पारित किया गया। 17 राज्यों के अनुमोदन के बाद 24 अप्रैल, 1993 को यह अधिनियम संविधान में अनुच्छेद–243(जी) द्वारा एक नई 11वीं अनुसूची एवं भाग–ix जोड़ता है, जिसमें 29 विषय हैं।

नगरपालिकाएँ, जैसे 73वें संशोधन अधिनियम ने भाग–ix अंतः स्थापित किया जिससे ग्रामीण भारत में स्थानीय शासन की सांविधानिक रूपरेखा तैयार हुई उसी प्रकार 74वें संशोधन द्वारा भाग–ixd अतः स्थापित करके एक आधार स्थापित किया गया जिस पर विधि की रचना करके नगरीय भारत के लिए स्वायत्त शासन की संस्थाएँ खड़ी की गई। भाग–ix d में दो प्रकार के निकाय अनुध्यात है–

(क) स्थानीय लोगों की सेवा के लिए संस्थाएँ।

(ख) विकास की योजना के लिए संस्थाएँ।

भारत की संसद द्वारा 1992 में पारित और 1 जून, 1993 में प्रवर्तित 74वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान में 69अ' 'द म्युनिसिपैलिटीज' शीर्षक से नया जोड़ा गया है। इस अधिनियम द्वारा प्रथम बार नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया। देशभर

में नगर स्थानीय निकायों की त्रि–स्तरीय व्यवस्था–नगर निगम, नगरपालिका और लघुत्तर नगरपालिका।

देश के स्थानीय स्वायत्त षासन के ढाँचे को निम्न रूप से रेखा जाता है।

शहरी क्षेत्र	**ग्रामीण क्षेत्र**
(क) नगर निगम	(क) ग्राम पंचायत
(ख) नगरपालिका	(ख) पंचायत समिति
(ग) अधिसूचित क्षेत्र समिति	(ग) जिला–परिशद्
(घ) नगर क्षेत्र समितियाँ	
(ङ) छावनी बोर्ड	
(च) टाउनशिप	
(छ) पोर्ट ट्रस्ट	
(ज) विशिष्ट उद्देश्य इकाईयाँ	

नगर निगम

भारत में सभी नगर निगमों में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती है–

1. उसका रूप संवैधानिक होता है अर्थात् अधिनियम द्वारा उसकी रचना की जाती है।
2. उसे अपने क्षेत्राधिकार में रहने वालों पर कर लगाकर वित्त एकत्र करने का अधिकार होता है।
3. नगर शासन को केन्द्रीय नियंत्रण से मुक्त रहकर काम करने का अधिकार होता है।
4. उसका स्वरूप एकोद्देशीय न होकर सामान्य उद्देश्यीय हुआ करता है।
5. नगरीय शासन का कार्य क्षेत्र एक निर्दिष्ट सीमा तक होता है।
6. यह राज्य सरकार के अधीन होती है जिसे इसके ऊपर नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण का अधिकार होता है।

नगर निगम सर्वोच्च नगरीय स्थानीय सरकार है जिसकी स्थापना बड़े शहरों में जनसंख्या के आधार पर की जाती है। राज्यों में नगर निगमों की स्थापना राज्य विधानमण्डलों तथा केन्द्रशासित क्षेत्रों में संसद द्वारा शासित क्षेत्रों में संसद द्वारा निर्मित अधिनियम द्वारा होती है। निगम एक वैधानिक संस्था है, जिसके अधिनियम में नगर निगम की संरचना शक्तियों, निगम के अधिकारियों और कर्मचारियों का विवरण आदि बातों का उल्लेख होता है।

भारत में नगर निगमों की संरचना में निम्नलिखित मुख्य अंग आते हैं।

1. परिषद्
2. मेयर या महापौर
3. समितियाँ एवं
4. नगर आयुक्त

परिषद् निगम की शक्तिशाली संस्था है और एक प्रकार से स्थानीय विधानसभा है। यह स्वशासन के सम्बन्ध में जनता की इच्छा प्रकट करती है। इसके लिए चुने सदस्य पार्षद कहलाते

हैं जो प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा पाँच वर्ष के लिए चुने जाते हैं। इसमें कुछ मनोनीत 'एल्डरमैन' भी सदस्य होते हैं। इसमें जनजाति, अनुसूचित जन–जाति और महिलाओं का भी प्रतिनिधित्व होता है। महापौर का पद सम्मानजनक एवं महत्वपूर्ण होता है। महापौर नगर की जनता द्वारा पाँच वर्ष के लिए चुना जाता है। यह नगर का प्रथम नागरिक होता है जो निगम की परिषदों की अध्यक्षता करता है। महापौर के साथ अ–महापौर का भी चुनाव होता है। निगम की प्रशासनिक शक्ति परिषद् में निहित होती है और उन शक्तियों का उपयोग परिषद् समितियों तथा मुख्य कार्यपालिका अधिकारी द्वारा परिषद् की बैठकों में किया जाता है जोकि महीने में प्रायः एक या दो बार से अधिक नहीं हो पाती। अतः कार्यों को उचित रूप से सम्पन्न करने के लिए परिषद् कुछ समितियों का गठन करती है। ये समितियाँ दो प्रकार की होती हैं– संवैधानिक समितियाँ एवं गैर–संवैधानिक समितियाँ।

निगम आयुक्त निगम का प्रमुख कार्यकारी अधिकारी होता है जिसकी नियुक्ति राज्य शासन द्वारा की जाती है। नगर आयुक्त भारतीय प्रशासनिक सेवा का वरिष्ठ सदस्य होता है। इसका वेतन निगम कोश से दिया जाता है। निगम के अन्तर्गत समस्त प्रशासनिक कार्य आयुक्त के नियंत्रण में होते हैं तथा वह आवश्यक मार्गदर्शन और नियंत्रण करता है। इसके कार्य अनेक प्रकार के होते हैं। वह बजट तैयार कर निगम के समक्ष रखता है तथा प्रशासनिक तन्त्र का प्रमुख होने के नाते सभी सरकारी कार्यों को विभिन्न विभागों के बीच बाँटता है।

नगर निगमों में प्रायः सभी कार्य सम्मिलित करने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। सामान्यतः निगमों के अन्तर्गत निगमों के कार्यों को दो भागों में विभाजित किया गया है–

1. अनिवार्य अथवा प्राथमिक कार्य
2. ऐच्छिक अथवा गौण कार्य

निगमों के अनिवार्य अथवा प्राथमिक कार्य वे है जिनको पूरा करना अधिनियम के अन्तर्गत आवश्यक है। सभी नगर निगमों के अनिवार्य कार्य निम्नलिखित है–

1. सड़क, सार्वजनिक निर्माण आदि कराना
2. नालियाँ, मूत्रालय तथा शौचालय आदि की व्यवस्था
3. सार्वजनिक स्थानों की सफाई, रोशनी व्यवस्था करना
4. अग्नि शमन सेवा उपलब्ध कराना
5. खतरनाक व्यापार पर नियंत्रण
6. शमशान, कब्रिस्तान आदि की व्यवस्था
7. मृत पशुओं के शवों का निस्तारण
8. जलदाय–व्यवस्था
9. जन्म एवं मृत्यु का पंजीकरण
10. पशु–अवरोध शालाओं का निर्माण एवं प्रबन्ध
11. जनस्वास्थ्य
12. संस्थाओं की सम्पत्ति का प्रबन्ध एवं

13. प्रशासनिक एवं अन्य प्रतिवेदन राज्य सरकार के सम्मुख प्रस्तुत करना।

ऐच्छिक अथवा गौण कार्य वे हैं, जो ये संस्थाएँ अपनी इच्छा से करती है अथवा न करने में स्वतंत्र है। कोई नागरिक न्यायालय द्वारा इन कार्यों को पूरा करने के लिए निगम को बाध्य नहीं कर सकता। कुछ मुख्य ऐच्छिक अथवा गौड कार्य इस प्रकार हैं–

1. सार्वजनिक पार्कों, उद्यानों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों, नाट्यशालाओं, अखाड़ों तथा क्रीडा स्थलों का निर्माण।
2. सार्वजनिक भवनों का निर्माण।
3. सड़कों के किनारे तथा अन्यत्र वृक्षों का रोपण तथा उनकी देखभाल।
4. गरीबों तथा अपाहिजों की सहायता।
5. लावारिस कुत्तों एवं छूटे सुअरों का नाश अथवा बन्दीकरण।
6. जनता के लिए संगीत का प्रबन्ध।
7. विशिष्ट अतिथियों का स्वागत।
8. विवाहों का पंजीकरण।
9. इमारतों तथा भूमि का सर्वेक्षण।
10. मेलों तथा प्रदर्शनियों का संगठन एवं व्यवस्था।

इसके अतिरिक्त संविधान की 12वीं अनुसूची जिसमें नगरपालिकाओं के कार्य क्षेत्र के साथ–साथ 18 क्रियाशील विषय वस्तु समाहित है।

1. नगरीय योजना जिसमें शहरी योजना सम्मिलित है।
2. भूमि उपयोग तथा इमारतों के निर्माण का नियमन।
3. आर्थिक तथा सामाजिक विकास के लिए योजनाएँ।
4. सड़के तथा पुल
5. घरेलू औद्योगिक तथा वाणिज्यिक उद्देश्यों के लिए जल का वितरण।
6. जन–स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं मलवाहन।
7. अग्नि–सेवाएँ।
8. नगरीय वृक्षारोपण, पर्यावरण का संरक्षण, जैवीय वैज्ञानिक पहलुओं में बढ़ोत्तरी।
9. कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा जिसमें विकलांग तथा मानसिक रूप से अस्वस्थ लोग सम्मिलित हो।
10. झुग्गी–झोपड़ियों में सुधार तथा स्थायित्व को बढ़ावा।
11. नगरीय गरीबी में कमी।
12. नगरीय सुख–सुविधाएँ, जैसे पार्क, बगीचों तथा खेल के मैदानों की व्यवस्था।
13. सांस्कृतिक शैक्षणिक तथा ललित कलाओं से सम्बन्धित पहलुओं में बढ़ोत्तरी।
14. दफनाना, कब्रिस्तान, दाह–संस्कार, शमशान घाट तथा शमशान में विद्युत प्रबन्ध।
15. पशुओं का बन्ध्य स्थान या बाड़े पशुओं की निर्दयता पर रोक लगाना।

16. जन्म–मरण सम्बन्धी आंकड़े जिसमें जन्म तथा मृत्यु का पंजीकरण सम्मिलित है।
17. सार्वजनिक, सुख–सुविधाएँ जिसमें गलियों में रोशनी, पार्किंग स्थान, बस स्टॉप तथा सार्वजनिक ऐश्वर्यता सम्मिलित है।
18. वधशालाओं तथा धर्म कारखानों का नियमन।

नगर निगम के कार्यों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करने के लिए सुशासन एक विशेषयुक्त शब्द है तथा अपने आप में कुछ मूल्यों को समेटे हुए है, जबकि शासन एक प्रक्रिया है जो मूल्यमुक्त व्यवस्था या निरपेक्ष व्यवस्था की ओर इंगित करती है। यह व्यवस्था की साख, उसकी वैधानिकता तथा उच्चतम दक्षता को स्थापित करने हेतु शासन के नवीन मूल्यों को आत्मसात करने की ओर इंगित करता है। साधारण आदमी की नजर में सुशासन बेहतर, षिक्षा, स्वास्थ्य–सेवा, बेहतर बिजली पानी और रोटी की समस्या का समाधान करने का विकल्प है– ऐसा शासन जिससे उसकी सुविधाएँ बढ़ सकें, उसके जीवन में सुधार हो सकें उसे विकास व आगे बढ़ने के समान अवसर तथा उचित परिवेश प्राप्त हो सकें।

निष्कर्ष

लोकतांत्रिक देशों में स्थानीय स्तर विकास द्वारा ही राष्ट्र का विकास सुनिश्चित किया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर विकास का तात्पर्य यह है कि केन्द्रीयकृत सत्ता का विभिन्न स्तरों पर हस्ताक्षरण किया जाना चाहिए जिसमें कि स्थानीय स्तर पर प्रशासनिक एवं जनभागीदारी की सहायता से किसी भी विकास के कार्यक्रम को सफल बनाया जा सके। राष्ट्रीय लक्ष्य को पूरा करने के लिए राज्य स्तर पर शहरी क्षेत्रों में नगर निगम द्वारा एवं ग्रामीण क्षेत्रों ग्राम पंचायत की अहम भूमिका है। इन प्रमुख संस्थानों के अलावा जनभागीदारी की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। सरकार के नियोजित कार्यक्रम में प्रशासन के कार्य के साथ–साथ जनता को भी अपने निजी प्रयास द्वारा सहयोगात्मक प्रयास करना होगा। तभी किसी भी राष्ट्र का विकास सम्भव है।

संदर्भ ग्रंथ

1. लक्ष्मीकांत, एम0, *भारत की राज व्यवस्था* मैनग्रा हिल एजूकेशन (इण्डिया), दिल्ली, 2015
2. अवस्थी, डॉ0 ए0पी0, *विकास प्रशासन,* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 3, 2001
3. नारंग, ए0एस0, *भारतीय शासन और राजनीति,* गीताज्जली पब्लिशिंग हाउस, 2010–11
4. जम्दग्नि डॉ0 अंजनी कुमार, *भारतीय संवैधानिक विकास,* नवराज प्रकाशन, दिल्ली, 2006
5. भसीन, अनीश, प्रतियोगिता दर्पण / 2014 / 83 / 16, आगरा।
6. माहेश्वरी, प्रो0 श्रीराम, *भारत में स्थानीय शासन,* लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2013–14, 2016
7. सिंह, बामेश्वर, *भारत में स्थानीय स्वशासन,* राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली–2001
8. सावले, द्वारका प्रसाद, *लोक प्रशासन,* एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2006
9. रामचन्द्रन, पद्मा, *भारत में लोक प्रशासन,* नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, 2011
10. शरण, डॉ0 परमात्मा एवं चतुर्वेदी डॉ0 दिनेश चन्द्र, *लोक प्रशासन,* मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ